पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

दीवानी विविध क्षेत्राधिकार संख्या 1804/2019

==========

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया सुपरवाइजिंग स्टाफ को-ऑपरेटिव हाउसिंग सोसाइटी लिमिटेड,बिहार सहकारी समिति पंजीकरण अधिनियम के तहत पंजीकृत एक सोसाइटी, जिसका पंजीकृत संख्या 30 पीएटी/1969 है, जिसका विधिवत प्रतिनिधित्व इसके सचिव, अर्थात श्री पुण्य देव उपाध्याय, आयु लगभग 74 वर्ष, पिता-स्वर्गीय हरिबंश उपाध्याय, के माध्यम से किया जाता है, जिसका कार्यालय हाउस नंबर 38, एसबीआई कॉलोनी नंबर 5, पोस्ट ऑफिस- बहादुरपुर हाउसिंग कॉलोनी, जिला-पटना में स्थित है ।

... ... याचिकाकर्तागण

बनाम

1. प्रवीण कुमार सिंह, पिता- स्वर्गीय अवध नंदन सिंह, निवासी- कैलाश भवन, न्यू बहादुरपुर, बाजार समिति रोड, थाना-बहादुरपुर, जिला-पटना।

2. अरविंद कुमार सिंह, पिता- स्वर्गीय अवध नंदन सिंह, निवासी- कैलाश भवन, न्यू बहादुरपुर, बाजार समिति रोड, थाना-बहादुरपुर, जिला-पटना।

3. प्रमोद कुमार सिंह, पिता- स्वर्गीय अवध नंदन सिंह, निवासी कैलाश भवन, न्यू बहादुरपुर, बाजार समिति रोड, थाना-बहादुरपुर, जिला-पटना।

4. डॉ. रंजन कुमार सिंह, पिता- स्वर्गीय हरदेव सिंह, निवासी- कैलाश भवन, न्यू बहादुरपुर, बाजार समिति रोड, थाना-बहादुरपुर, जिला-पटना।

5. रेणु कुमारी, पिता- स्वर्गीय हरदेव सिंह, निवासी- कैलाश भवन, न्यू बहादुरपुर, बाजार समिति रोड, थाना-बहादुरपुर, जिला-पटना।

6. डॉ. रोहित सिंह, पिता- स्वर्गीय डॉ. माणिक सिंह, निवासी- लक्ष्मी नर्सिंग होम, कंकड़बाग रोड, पेट्रोल पंप के सामने, पटना।

... ... प्रतिवादीगण

==========

उपस्थिति :

याचिकाकर्ता/ओं की ओर से : श्री जे.एस. अरोड़ा, वरिष्ठ अधिवक्ता

श्री मनोज कुमार, अधिवक्ता

श्री हिमांशु शेखर, अधिवक्ता

प्रतिवादी/प्रतिवादियों की ओर से: श्री जीतेन्द्र किशोर वर्मा, अधिवक्ता

श्री सिद्धार्थ प्रसाद, अधिवक्ता

श्री ओम प्रकाश कुमार, अधिवक्ता

श्री अंजनी कुमार, अधिवक्ता

सुश्री कुमारी श्रेया, अधिवक्ता

श्री यश रूहान, अधिवक्ता

==

सिविल प्रक्रिया संहिता---आदेश VI नियम 2, आदेश VII नियम 11, नियम 11(डी), नियम 3, धारा 2(2), धारा 96, 100—क्षेत्राधिकार त्रुटि—आदेश VII के तहत याचिका पर सुनवाई नियम 11 को मुकदमे के पूर्व-परीक्षण के रूप में नहीं माना जाएगा—निपटाया कानून—जमाबंदी) उत्परिवर्तन न तो संपत्ति का स्वामित्व बनाता है और न ही छीनता है—ट्रायल कोर्ट ने गलती की है रिकॉर्ड पर—कानून के प्रावधानों के विपरीत कार्य किया—खराब प्रारूपण के एक मामले के परिणामस्वरूप ट्रायल कोर्ट ने कार्रवाई के कारण की अनुपस्थिति और ओ की अनुपस्थिति के बारे में अपना निष्कर्ष दर्ज किया।

आदेश: वर्तमान याचिका सुनवाई योग्य है—भारत का संविधान—अनुच्छेद 227—ट्रायल कोर्ट का आदेश टिकाऊ नहीं है—क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि से ग्रस्त है—आदेश रद्द किया जाता है।

==========

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==========

कोरम: माननीय न्यायमूर्ति श्री अरुण कुमार झा

सीएवी निर्णय

दिनांक: 03-04-2024

यह याचिका भारतीय संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश-VIII, पटना द्वारा टाइटल सूट संख्या 125/2017 में पारित दिनांक 19.09.2019 के आदेश को रद्द करने के लिए दायर की गई है, जिसके तहत अन्य राहतों के अलावा उपरोक्त मुकदमे की शिकायत को खारिज कर दिया गया था।

2. याचिकाकर्ता का मामला, अनावश्यक विवरणों से अलग, यह है कि वादी/याचिकाकर्ता जो एक विधिवत पंजीकृत सहकारी समिति है, ने टाइटल सूट संख्या 125/2017 दायर किया है। वादी समिति ने विभिन्न पंजीकृत बिक्री विलेखों के माध्यम से परफॉर्मा प्रतिवादी के पिता से विभिन्न भूखंडों की *123 कट्ठा* जमीन हासिल की। वर्तमान मुकदमा हनुमान नगर में स्थित वादी समिति की एक कॉलोनी के संबंध में है जिसमें एक प्लॉट नंबर है 900, क्षेत्रफल *16 कट्ठा 3 धुर 16 धुरकी* है, जिसे दिनांक 15.06.1982 और 16.06.1982 को तीन अलग-अलग विक्रय विलेखों के माध्यम से खरीदा गया था। ले-आउट प्लान के अनुसार, भूखंडों को सोसायटी के सदस्यों को आवंटित किया गया था। उक्त भूमि के सुदूर पूर्व में, सोसायटी द्वारा सामुदायिक भवन और दुकान के निर्माण के लिए *4 कट्ठा 16 धुर* भूमि छोड़ी गई है, जिसका उपयोग और लाभ सोसायटी के सदस्यों को मिलेगा। प्रतिवादी प्रथम पक्ष को मुख्य प्रतिवादी कहा जाता है और यह प्रस्तुत किया गया है कि मुख्य प्रतिवादियों ने मिलीभगत और एक-दूसरे के साथ मिलीभगत करके, 14.10.2014 को मध्यरात्रि में, अवैध तरीकों से वादी की भूमि के एक हिस्से से खंभे और कंटीले तारों को उखाड़ दिया, जिसे वादी ने सामुदायिक भवन के निर्माण के लिए रखा था। दिनांक 12.02.2016 को मुख्य प्रतिवादियों ने बलपूर्वक तथा असामाजिक तत्वों की सहायता से वादी की उक्त भूमि पर तोड़फोड़ की तथा अतिक्रमण कर लिया, जो सामुदायिक भवन तथा कियोस्क के निर्माण के लिए छोड़ी गई थी। वादी ने विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष वाद दायर कर निम्नलिखित अनुतोष की मांग की:-

"(क) उपर्युक्त तथ्यों के न्यायनिर्णयन कर यह घोषित किया जाए कि वादी को अनुसूची-1 की भूमि पर वैध अधिकार प्राप्त है, जिस पर वादी का कब्जा है।

(ख) अनुतोष संख्या 1 प्रदान किए जाने पर मुख्य प्रतिवादी को अनुसूची-1 की भूमि से अतिक्रमण हटाने का निर्देश दिया जाए अन्यथा मुख्य प्रतिवादियों के खर्च पर न्यायालय की प्रक्रिया के माध्यम से इसे हटाया जाए।

(ग) कि मुख्य प्रतिवादियों को इस मुकदमे के लंबित रहने के दौरान अनुसूची-1 में वर्णित भूमि को बेचने, हस्तांतरित करने, गिरवी रखने या किसी भी तरह से भूमि की भौतिक विशेषता को बदलने से अंतरिम निषेधाज्ञा के आदेश द्वारा रोका जाए।

(घ) कि मुकदमे की खर्च वादी के पक्ष में दी जाए।

(ङ) कि कोई अन्य अनुतोष जिसके लिए वादी हकदार है, उसे भी प्रदान किया जाए।

3. मुख्य प्रतिवादी उपस्थित हुए और उन्होंने उक्त भूमि पर दावा करते हुए अपने लिखित बयान दाखिल किए। बाद में मुख्य प्रतिवादी संख्या 1, प्रतिवादी संख्या 1 ने 01.09.2018 को सिविल प्रक्रिया संहिता (इसके बाद 'संहिता') के आदेश VII नियम 11 के तहत वाद को खारिज करने के लिए एक याचिका दायर की, जिसमें तर्क दिया गया कि वाद में कार्रवाई का कारण नहीं बताया गया है और मुकदमे को आगे बढ़ाना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। वादी/याचिकाकर्ता ने 15.09.2018 को एक प्रतिउत्तर दायर किया। विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने पक्षों को सुनने के बाद 19.09.2019 को एक आदेश पारित किया और विवादित आदेश के तहत वाद को खारिज कर दिया।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री जे.एस. अरोड़ा ने प्रस्तुत किया कि विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने संहिता के आदेश VII नियम 11 के दायरे और उद्देश्य की सराहना नहीं करके अधिकार क्षेत्र संबंधी त्रुटि की है। विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने यह भी नहीं समझकर अधिकार क्षेत्र संबंधी त्रुटि की है कि संहिता के आदेश VII नियम 11 के तहत याचिका पर सुनवाई को मुकदमे की पूर्व सुनवाई नहीं माना जाएगा। श्री अरोड़ा ने आगे प्रस्तुत किया कि विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने यह नहीं समझा और विचार नहीं किया है कि संहिता के आदेश VII नियम 11 के तहत कार्यवाही में, वाद पर विचार उसके किसी भाग

को छोड़े, जोड़े या निकाले बिना समग्र रूप से किया जाना चाहिए। श्री अरोड़ा ने **कुमारी गीता बनाम नंजुंदास्वामी एवं अन्य ने एआईआर 2023 एससी 5516 में रिपोर्ट** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय पर भरोसा किया कि संहिता के आदेश VII नियम 11 के तहत शक्ति का प्रयोग करने के लिए परीक्षण यह है कि यदि वाद में किए गए प्रत्येक कथन को संपूर्णता में, जिन दस्तावेजों पर भरोसा किया गया है, के साथ लिया जाता है, तो क्या उसी के परिणामस्वरूप डिक्री पारित की जाएगी। सही परीक्षण सबसे पहले वाद को अर्थपूर्ण रूप से पढ़ना और समग्र रूप से उसे सत्य मानना है। इस तरह पढ़ने पर, यदि वाद में कार्रवाई का कारण बताया गया है, तो संहिता के आदेश VII नियम 11 के तहत वाद को खारिज करने का आवेदन विफल हो जाना चाहिए। इसे नकारात्मक रूप से कहें तो, जहां यह कार्रवाई का कारण नहीं बताता है, वाद खारिज कर दी जाएगी। वाद को आंशिक रूप से खारिज नहीं किया जा सकता है। इसी प्रस्ताव पर, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने **बिस्वानथ बनिक एवं अन्य बनाम सुलंगा बोस एवं अन्य, एआईआर 2022 एससी 1519** में रिपोर्ट किया गया। के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय पर भी भरोसा किया। इस निर्णय के पैराग्राफ क्रमांक 7.1 और 7.4 इस प्रकार हैं:-

> *"**7.1.** उपरोक्त निर्णय से और यहां तक कि इस न्यायालय द्वारा निर्णयों की श्रृंखला में अन्यथा भी, आदेश VII नियम 11 सीपीसी के तहत एक आवेदन पर विचार करते समय, न्यायालय को संपूर्ण वाद-पत्र कथनों को पढ़ना होगा और केवल कुछ पंक्तियों/अंशों को पढ़कर और वाद-पत्र के अन्य प्रासंगिक भागों को अनदेखा करके वाद-पत्र को खारिज नहीं किया जा सकता है।*
>
> ***7.4.** वाद-पत्र को खारिज करते हुए, उच्च न्यायालय ने यह भी देखा और माना कि मूल मालिक के खिलाफ संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 53 ए के तहत सरल घोषणा के लिए मुकदमा बनाए रखने योग्य नहीं होगा और इसके लिए दिल्ली मोटर कंपनी (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया जाता है। हालांकि, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि वादीगण ने भी स्थायी निषेधाज्ञा के लिए, डिक्री के लिए प्रार्थना की है, जिसमें दावा किया गया है कि वे कब्जे में हैं और संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 53 ए को लागू करते हुए स्थायी निषेधाज्ञा की घोषणा की गई है। जब वाद स्थायी निषेधाज्ञा के डिक्री के लिए है और यह कहा गया है कि वादीगण समझौते के अनुसार वाद संपत्ति के कब्जे में हैं और उसके*

बाद, उन्होंने भूमि का विकास किया है और वे बारह वर्षों से अधिक समय से लगातार कब्जे में हैं और वे निगम को कर भी दे रहे हैं, तो कार्रवाई का कारण उस तिथि को उत्पन्न हुआ माना जा सकता है जिस दिन कब्जे में बाधा डालने की मांग की गई है। यदि ऐसा है, तो स्थायी निषेधाज्ञा के लिए डिक्री के लिए वाद को सीमा द्वारा वर्जित नहीं कहा जा सकता है। यह कानून का स्थापित सिद्धान्त है कि वाद को आंशिक रूप से खारिज नहीं किया जा सकता है। अन्यथा भी, मांगी गई अनुतोष परस्पर जुड़ी हुई हैं। वादीगण संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 53ए के तहत किसी अनुतोष के हकदार होंगे या नहीं, इस पर विचार मुकदमे के समय किया जाना है, लेकिन इस स्तर पर यह नहीं कहा जा सकता कि धारा 53ए के तहत मांगी गई अनुतोष के लिए मुकदमा बिल्कुल भी स्वीकार्य नहीं होगा और इसलिए वादपत्र आदेश VII नियम 11 सीपीसी के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए खारिज किए जाने योग्य है।

5. श्री अरोड़ा ने आगे कहा कि वास्तव में वाद को खारिज करने की कोई गुंजाइश नहीं थी। विवादित आदेश वाद को खारिज करने के लिए कोई स्वीकार्य या वैध आधार नहीं दर्शाता है और विवादित आदेश पूरी तरह से गलत है। इसके अलावा, वाद को खारिज करने के लिए संहिता के आदेश VII नियम 11 के तहत दायर याचिका में वाद को किसी कानून के तहत वर्जित होने की बात नहीं कही गई है और इसमें केवल इतना कहा गया है कि वाद में कार्रवाई के किसी कारण का वर्णन नहीं किया गया है और उक्त तर्क को विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने स्वीकार कर लिया है। हालांकि, वाद पत्र को पढ़ने पर यह पता चलता है कि वाद में वाद कारणका पूरी तरह से उल्लेख किया गया है। विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने स्थापित कानून के खिलाफ काम किया है कि वाद कारणके लिए केवल एक वाक्य या कोई पैराग्राफ नहीं देखा जाना चाहिए, बल्कि वाद को समग्र रूप से देखा जाना चाहिए क्योंकि कार्रवाई का कारण वाद में बताए गए तथ्यों और उससे उत्पन्न होने वाले निहितार्थों का एक समूह है। इस संबंध में, श्री अरोड़ा ने फिर से **बिस्वनाथ बनिक एवं अन्य (सुप्रा)** के निर्णय पर भरोसा किया। श्री अरोड़ा ने आगे कहा कि इस तरह विद्वान विचारण न्यायालयकेवल इस बिंदु पर ध्यान केंद्रित करने में उचित नहीं था कि वादी ने म्यूटेशन के संबंध में कुछ नहीं कहा है क्योंकि इसका वाद कारणसे कोई लेना-देना नहीं है। स्वामित्व का प्रश्न स्वामित्व के दस्तावेजों के आधार पर देखा जाना चाहिए और वह भी

सुनवाई के चरण में और यह एक स्थापित कानून है कि म्यूटेशन न तो संपत्ति का स्वामित्व बनाता है और न ही छीनता है और इस तरह म्यूटेशन की अनुपस्थिति के आधार पर पारित किया गया विवादित आदेश पूरी तरह से विकृत, गलत और कानून के स्थापित सिद्धांतों के खिलाफ है। इस संबंध में, श्री अरोड़ा ने **अजीत कौर उर्फ़ सुरजीत कौर बनाम दर्शन सिंह (मृत) द्वारा कानूनी प्रतिनिधियों के माध्यम से उर्फ़ अन्य, (2019) 13 एससीसी 70 में रिपोर्ट किया गया**, के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का उल्लेख किया। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने **भीमाबाई महादेव काम्बेकर (मृत) द्वारा कानूनी प्रतिनिधि बनाम आर्थर आयात और निर्यात कंपनी और अन्य (2019) 3 एससीसी 191** में रिपोर्ट किया गया के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भी भरोसा किया, इस बिंदु पर कि म्यूटेशन प्रविष्टियां न तो संपत्ति पर अधिकार बनाती हैं और न ही समाप्त करती हैं। म्यूटेशन प्रविष्टियों में स्वामित्व का कोई अनुमानित मूल्य नहीं होता है और वे केवल उन व्यक्तियों को भूमि राजस्व का भुगतान करने में सक्षम बनाती हैं, जिनके पक्ष में प्रविष्टियां की गई हैं। श्री अरोड़ा ने आगे प्रस्तुत किया कि विवादित आदेश ने एक विचित्र स्थिति पैदा कर दी है क्योंकि कानून की अदालत ने अपने आदेश के प्रभाव और प्रभाव की सराहना किए बिना एक वाद को लापरवाही से खारिज कर दिया है जो उस पक्ष को गंभीर नुकसान, परेशानी और उत्पीड़न का कारण बनता है जिसकी वाद को खारिज करने के लिए बिल्कुल भी उत्तरदायी नहीं था।

6. श्री अरोड़ा ने आगे कहा कि वास्तव में विवादित आदेश काफी अस्पष्ट है। विवादित आदेश से ऐसा प्रतीत होता है कि आदेश वाद में कारण के अभाव को मानते हुए पारित किया गया है, लेकिन वाद के पैरा क्रमांक 5 और 9 में स्पष्ट रूप से कारण दर्शाया गया है। यद्यपि विवादित आदेश में सीमा-बंधन का उल्लेख किया गया है, लेकिन यह स्पष्ट है कि विवादित आदेश संहिता के आदेश VII नियम 11(डी) के अंतर्गत पारित नहीं किया गया है। जहां तक विद्वान अधीनस्थ न्यायालय द्वारा कारण के अभाव का उल्लेख किया गया है, स्पष्ट रूप से यह वाद में किए गए कथनों, विशेष रूप से वाद के पैरा क्रमांक 3, 4 और 5 के आलोक में अभिलेख की त्रुटि है। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे कहा कि विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने अन्य अनुतोषों और कारण के बारे में अपनी राय व्यक्त नहीं की है, इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि वाद को आंशिक रूप से खारिज कर दिया गया है। लेकिन यह स्वीकार्य नहीं है और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के **माधव प्रसाद अग्रवाल एवं अन्य बनाम एक्सिस बैंक लिमिटेड एवं अन्य** के मामले में दिए गए निर्णय पर निर्भर करता है, जिसकी

रिपोर्ट (2019) 7 एससीसी 158 में दी गई है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि सीपीसी के आदेश VII नियम 11(डी) के तहत शक्तियों के प्रयोग में वाद को खारिज करने की अनुतोष केवल प्रतिवादी(ओं) में से किसी एक के संबंध में नहीं दी जा सकती है, यानी ऐसी शक्ति के प्रयोग में वाद को पूरी तरह से खारिज किया जाना चाहिए या बिल्कुल भी खारिज नहीं किया जाना चाहिए। यदि वाद कुछ प्रतिवादी(ओं) और/या संपत्तियों के खिलाफ जीवित रहता है तो सीपीसी के आदेश VII नियम 11(डी) का कोई आवेदन नहीं है और पूरे मुकदमे को सुनवाई के लिए आगे बढ़ना चाहिए। इस प्रकार, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों में कानून की नजर में विवादित आदेश संधारणीय नहीं है और इसे अलग रखा जाना चाहिए।

7. सर्वप्रथम, प्रतिवादी संख्या 1 के विद्वान अधिवक्ता श्री जितेन्द्र किशोर वर्मा ने वर्तमान याचिका की मान्यता का मुद्दा उठाया। श्री वर्मा ने प्रस्तुत किया कि वाद की अस्वीकृति धारा 2(2) के तहत डिक्री की परिभाषा के अंतर्गत आती है और धारा 2(2) में डिक्री में वाद की अस्वीकृति शामिल मानी जाएगी और इस कारण से वाद को खारिज करने वाला विद्वान विचारण न्यायालयका आदेश धारा 96 के तहत प्रथम अपील के अधीन है। इस संबंध में विद्वान अधिवक्ता ने **सैय्यद अयाज अली बनाम प्रकाश जी गोयल एवं अन्य (2021) 7 एससीसी 456** में रिपोर्ट, के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया।, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि धारा 2(2) के अनुसार डिक्री होने के कारण वाद को खारिज करने के विचारण न्यायालयके आदेश के खिलाफ, वाद को खारिज करने वाले ऐसे आदेश के खिलाफ उचित उपाय संहिता की धारा 96 के तहत पहली अपील है और वाद को खारिज करने के आदेश के खिलाफ भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत रिट याचिका को उच्च न्यायालय ने सही तरीके से खारिज कर दिया था। इसी प्रस्ताव पर, विद्वान अधिवक्ता ने **मीरा सिन्हा बनाम गिरजा सिन्हा, 2009 (1) पीएलजेआर 329 में रिपोर्ट की गई**, के मामले में इस न्यायालय की एक खंडपीठ के फैसले पर भी भरोसा किया। विद्वान अधिवक्ता ने **शमशेर सिंह बनाम राजिंदर प्रसाद और अन्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया, एआईआर 1973 एससी 2384 में रिपोर्ट की गई जिसमें यह माना गया है कि संहिता के आदेश VII नियम 11 के तहत एक वाद को खारिज करने वाला आदेश एक डिक्री के रूप में अपील करने योग्य है और जब आदेश अपील में उलट दिया जाता है, तो संहिता की धारा 100 के तहत दूसरी अपील होगी।

8. श्री वर्मा ने आगे प्रस्तुत किया कि वादी ने आदेश VII नियम 3 के प्रावधान का अनुपालन नहीं किया है क्योंकि वाद में संपत्ति की पहचान करने के लिए पर्याप्त विवरण नहीं है। यदि संपत्ति की पहचान नहीं की जा सकती है, भले ही मुकदमा अनुमति दी गई हो, डिक्री निष्पादन योग्य नहीं रहेगी। यदि संहिता के आदेश VII नियम 3 का उल्लंघन किया गया है और विवरण अनुपस्थित हैं, तो वाद को खारिज कर दिया जाएगा और इस संबंध में, श्री वर्मा ने **एआईआर 1999 कर्नाटक 421** में रिपोर्ट किए गए **अंबन्ना बनाम घंटेप्पा** के मामले में कर्नाटक उच्च न्यायालय के एक निर्णय पर भरोसा किया। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि संपत्ति का विवरण अस्पष्ट है और संहिता के आदेश VII नियम 3 के तहत पर्याप्त पहचान का अभाव है और ये तथ्य कार्रवाई का कारण बनाने के लिए महत्वपूर्ण हैं। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि वादी मुकदमे की संपत्ति का सही स्थान बताने में विफल रहा है क्योंकि प्लॉट नंबर 900, 1 एकड़ 85 दशमलव का एक बड़ा प्लॉट है। वादी ने *16 कट्ठा 3 धुर 16 धुरकी* जमीन खरीदने का दावा किया है, जिसमें से *4 कट्ठा 16 धुर जमीन* को वाद संपत्ति बताया गया है, जिस पर अतिक्रमण किया गया है, लेकिन न तो *16 कट्ठा 3 धुर 16 धुरकी* जमीन की पहचान है और न ही प्लॉट संख्या 900 में *4 कट्ठा 16 धुर* जमीन की पहचान है। यहां तक कि अनुसूची-1 में दिए गए विवरण से भी निश्चित रूप से पहचान नहीं हो पा रही है। चूंकि यह अतिक्रमण हटाने का वाद है, इसलिए यह तभी स्वीकार्य होगा, जब वाद संपत्ति की स्पष्ट पहचान हो।

9. श्री वर्मा ने संहिता के आदेश VII नियम 3 के अनुसार वाद संपत्ति की पर्याप्त पहचान न होने के बारे में अपना पक्ष दोहराया और **चर्च ऑफ क्राइस्ट चैरिटेबल ट्रस्ट एंड एजुकेशनल चैरिटेबल सोसाइटी बनाम पोन्नियम्मन एजुकेशनल ट्रस्ट** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भी भरोसा किया, **(2012) 8 एससीसी 706 में** रिपोर्ट किया गया कि प्रत्येक तथ्य जो वादी को डिक्री प्राप्त करने में सक्षम बनाने के लिए आवश्यक है, उसे स्पष्ट शब्दों में निर्धारित किया जाना चाहिए। श्री वर्मा ने आगे कहा कि चूंकि कार्रवाई का कारण तथ्यों का एक समूह है, जो उन पर लागू कानून के साथ लिया जाता है, वादी को प्रतिवादी के खिलाफ अनुतोष का अधिकार देता है और जब संपत्ति के अस्पष्ट विवरण पर मुकदमा दायर किया गया है, तो यह वादी के मुकदमा करने के अधिकार पर प्रश्नचिह्न लगाता है और कार्रवाई का कोई कारण नहीं होगा। श्री वर्मा ने आगे **टी. अरिवंदनम बनाम टी.वी. सत्यपाल एवं अन्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का हवाला दिया, जिसकी रिपोर्ट **एआईआर 1977 एससी 2421** में दी गई थी, जिसमें

प्रस्ताव था कि यदि वाद में वाद दायर करने का स्पष्ट अधिकार प्रकट नहीं होता है, तो विद्वान अधीनस्थ न्यायालय को संहिता के आदेश VII नियम 11 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करना चाहिए, जिसमें यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि उसमें उल्लिखित आधार पूरे हों। इस प्रकार, विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि विवादित आदेश में कोई विकृति नहीं है और विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने मामले का संभावित दृष्टिकोण लिया। श्री वर्मा ने आगे दोहराया कि विवादित आदेश में निष्कर्ष सही या गलत हो सकता है, लेकिन यह निश्चित रूप से विकृत नहीं है।

10. प्रतिवादी संख्या 1 के विद्वान अधिवक्ता के तर्क का जवाब देते हुए, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री जे.एस. अरोड़ा ने दलील दी कि वर्तमान याचिका भारतीय संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत विचारणीय है क्योंकि विद्वान अधीनस्थ न्यायालय का आदेश पूरी तरह से विपरीत है और अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर पारित किया गया है। श्री अरोड़ा ने **बी. पूंडाचा एवं अन्य बनाम के.डी. गणपति एवं अन्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया, **जो (2011) 12 एससीसी 600: एआईआर 2011 एससी 1353** में रिपोर्ट किया गया है। इस निर्णय के पैराग्राफ संख्या 9 और 12 इस प्रकार हैं:-

> *"9. शालिनी श्याम शेट्टी बनाम राजेंद्र शंकर पाटिल [(2010) 8 एससीसी 329: (2010) 3 एससीसी (सिविल) 338] में न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय की शक्ति के दायरे की फिर से जांच की और निम्नलिखित प्रस्ताव रखा: (एससीसी पृष्ठ 331-32)*
>
> *"न्याय के संरक्षक के रूप में उच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 227 का स्वप्रेरणा से आह्वान किया जा सकता है। इस शक्ति का अनुचित और लगातार प्रयोग प्रतिकूल होगा और इस असाधारण शक्ति की ताकत और जीवन शक्ति को खत्म कर देगा। यह शक्ति विवेकाधीन है और इसका प्रयोग न्यायसंगत सिद्धांत पर बहुत संयम से किया जाना चाहिए। न्यायिक हस्तक्षेप की इस आरक्षित और असाधारण शक्ति का प्रयोग केवल व्यक्तिगत मामलों में अनुतोष प्रदान करने के लिए नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि व्यापक जनहित में न्याय प्रशासन में जनता के विश्वास को बढ़ावा देने के लिए निर्देशित किया जाना चाहिए, जबकि अनुच्छेद 226 व्यक्तिगत शिकायतों के संरक्षण के लिए है।*

इसलिए, अनुच्छेद 227 के तहत शक्ति अप्रतिबंधित हो सकती है, लेकिन इसका प्रयोग उच्च स्तर के न्यायिक अनुशासन के अधीन है। अनुच्छेद 227 के तहत प्रशासनिक और न्यायिक दोनों तरह के अधीक्षण का उद्देश्य न्याय की पूरी मशीनरी की दक्षता, सुचारू और व्यवस्थित कामकाज को इस तरह से बनाए रखना है कि इससे इसे किसी भी तरह की बदनामी न हो। अनुच्छेद 227 के तहत हस्तक्षेप की शक्ति को न्यूनतम रखा जाना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि न्याय का पहिया रुक न जाए और न्याय का फव्वारा शुद्ध और अदूषित बना रहे ताकि उच्च न्यायालय के अधीनस्थ न्यायाधिकरणों और अदालतों के कामकाज में जनता का विश्वास बना रहे।

12. इस स्तर पर, हम एक अधिवक्ता और उसके मुवक्किल के बीच संबंधों की प्रकृति पर भी ध्यान दे सकते हैं, जो पूरी तरह से विश्वास और भरोसे पर आधारित है। एक अधिवक्ता गोपनीय जानकारी किसी और को नहीं दे सकता। ऐसा इसलिए है क्योंकि वह अपने मुवक्किल का न्यासी है, जो अधिवक्ता पर भरोसा और विश्वास रखता है। इसलिए, उसका कर्तव्य है कि वह अपने मुवक्किल के प्रति अपने सभी दायित्वों को सावधानी से पूरा करे और सद्भावना से काम करे। चूंकि मुवक्किल कानूनी कार्यवाही को संभालने का पूरा दायित्व एक अधिवक्ता को सौंपता है, इसलिए उसे सर्वोच्च सद्भावना, ईमानदारी, निष्पक्षता और वफादारी के सिद्धांतों के अनुसार काम करना चाहिए।

11. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे कहा कि उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह देखे कि विद्वान विचारण न्यायालयअपने अधिकार क्षेत्र में काम करे। विद्वान विचारण न्यायालयने कार्यवाही की है और वाद कारणकी अनुपस्थिति के बारे में निष्कर्ष दर्ज किया है जो रिकॉर्ड के सामने स्पष्ट रूप से एक त्रुटि है। यह वाद में उल्लिखित तथ्यों के विरुद्ध है। यद्यपि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत शक्ति विवेकाधीन है, फिर भी इसे उच्च न्यायालय में न्याय तंत्र की दक्षता और सुचारू और व्यवस्थित कामकाज को इस तरह से बनाए रखने के उद्देश्य से निहित किया गया है कि इससे इसे कोई बदनामी न हो। यह शक्ति यह देखने के लिए है कि अधीनस्थ न्यायालय के आदेशों से कोई गंभीर अन्याय या न्याय की घोर विफलता न हो। श्री अरोड़ा ने आगे कहा कि पर्यवेक्षी अधिकार क्षेत्र का प्रयोग केवल तथ्य या कानून की त्रुटियों को ठीक करने के लिए उपलब्ध नहीं है जब तक कि

निम्नलिखित आवश्यकताएं पूरी न हों; (i) त्रुटि कार्यवाही के दौरान स्पष्ट और प्रत्यक्ष है जैसे कि यह स्पष्ट अज्ञानता या कानून के प्रावधानों की घोर अवहेलना पर आधारित है और (ii) इसके कारण गंभीर अन्याय या न्याय की घोर विफलता हुई है।

12. श्री अरोड़ा ने आगे कहा कि वाद संपत्ति की पहचान करने में अनिश्चितता पर कोई सवाल नहीं हो सकता है। वाद संपत्ति का स्पष्ट रूप से वाद पत्र की अनुसूची 1 में उल्लेख किया गया है और यदि कभी कोई मुद्दा उठता है, तो विद्वान अधीनस्थ न्यायालय को इस स्थिति को स्पष्ट करने से कोई नहीं रोक सकता है। लेकिन वादी को कोई नोटिस जारी नहीं किया गया और संपत्ति की पहचान पर संदेह को स्पष्ट करने या वाद संपत्ति के विवरण का पता लगाने के लिए वादी को निर्देश देने वाले कोई आदेश पारित नहीं किए गए। इसके अलावा, वादी के मामले का सार केवल संहिता के आदेश VI नियम 2 के तहत वाद पत्र में भौतिक तथ्यों के संबंध में संक्षिप्त रूप में दिया जाना है। श्री अरोड़ा ने आगे कहा कि विद्वान निचली अदालत ने म्यूटेशन या सरकार को भूमि राजस्व के भुगतान के संबंध में कानून की स्थापित स्थिति के स्पष्ट रूप से खिलाफ जाकर काम किया है, जो अपने आप में वादी को स्वामित्व या कब्जे से अनुतोष देने से इनकार करने का आधार नहीं होगा। श्री अरोड़ा ने आगे कहा कि विद्वान अधीनस्थ अदालत ने **टी. अरिवंदम बनाम टी.वी सत्यपाल और अन्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर गलत तरीके से भरोसा किया, जो **एआईआर 1977 एससी 2421 में** रिपोर्ट किया गया था और उक्त निर्णय प्रतिवादी के मामले में मदद नहीं करता है क्योंकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने बहुत स्पष्ट रूप से निर्धारित किया है कि अधीनस्थ अदालत को यह देखने का ध्यान रखना चाहिए था कि संहिता के आदेश VII नियम 11 में उल्लिखित आधार यह मानने से पहले पूरे होते हैं कि वाद मुकदमा करने के अधिकार का खुलासा नहीं करती है। लेकिन वर्तमान मामले में, वाद पत्र के पैराग्राफ न० 3, 4 और 5 में याचिकाकर्ता की वाद, पंजीकृत बिक्री विलेखों के आधार पर उसके स्वामित्व के आधार पर मुकदमा करने का उसका अधिकार स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है और पैराग्राफ न० 9 में यह भी दर्शाया गया है कि इसके लिए कार्रवाई का कारण किस समय पर कब उत्पन्न हुआ।

13. श्री अरोड़ा ने आगे कहा कि विद्वान अधीनस्थ न्यायालय द्वारा की गई त्रुटि रिकॉर्ड के आधार पर स्पष्ट है जब उसने दाखिल खारिज वादी के पक्ष में नहीं होने का उल्लेख किया जबकि वाद के साथ संलग्न *मालगुजारी* रसीदों में *जमाबंदी* (दाखिल खारिज) संख्या अंकित है और इस कारण से विवादित आदेश में गलत निष्कर्ष निहित है। विद्वान वरिष्ठ

अधिवक्ता ने यह भी बताया कि दिनांक 18.08.2017, 02.11.2017 तथा 09.11.2017 को तीन सेट लिखित कथन दाखिल किए गए, लेकिन वाद संपत्ति के विवरण के संबंध में कोई पूछताछ दाखिल नहीं की गई, जबकि संहिता के आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत याचिका दिनांक 01.09.2018 को ही दाखिल की गई है। प्रतिवादियों ने वादी के दावे तथा वाद कारणके अभाव को केवल इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि वादी का दावा उस संपत्ति तक सीमित हो सकता है, जिसकी जमाबंदी संख्या 2331 है, न कि उस भूमि के लिए, जिसकी जमाबंदी संख्या 2064 है। स्पष्ट रूप से, जमाबंदी वादी के स्वामित्व को अस्वीकार करने या यह मानने का आधार नहीं हो सकती कि वादी को मुकदमा करने का कोई अधिकार नहीं है या उसके लिए कोई कार्रवाई का कारण नहीं बनता है।

14. प्रतिवादी पक्षों के प्रस्तुतीकरण को ध्यान में रखते हुए तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अध्ययन करने के पश्चात, इस वाद में जो संक्षिप्त प्रश्न उठता है वह यह है कि क्या वर्तमान याचिका पोषणीय है तथा आक्षेपित आदेश विपरीत है तथा क्या वादी को दिए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों में कार्यवाही का कारण तथा वाद दायर करने का अधिकार है। पोषणीयता पर विचार करने से पूर्व, यह लाभदायक होगा कि मामले के तथ्यों तथा आक्षेपित आदेश की विषय-वस्तु पर पुनः विचार किया जाए। वादी अनुसूची-1 भूमि पर अपना स्वामित्व होने का दावा करता है तथा अन्य राहतों के अतिरिक्त मुख्य प्रतिवादी को अनुसूची-1 भूमि से अतिक्रमण हटाने का निर्देश देने की मांग करता है।

15. अब वाद की अनुसूची-1 इस प्रकार है:-

<u>अनुसूची-1</u>

<u>"मुख्य प्रतिवादियों द्वारा अतिक्रमण की गई भूमि का विवरण।</u>

वह समस्त भूमि तथा टुकड़ा जिसका कुल क्षेत्रफल 6534 वर्ग फीट है। उत्तर से दक्षिण 163 फीट और पूर्व से पश्चिम 40'1" के बराबर 4 कट्ठा 16 धूर का उल्लेख किया गया है जो मौजा-सादिकपुर जोगी, थाना-पत्रकार नगर, जिला पटना में स्थित तौजी संख्या 272, खाता संख्या 363, सर्वे प्लाट संख्या 900 का हिस्सा है, जिसकी चौहद्दी इस प्रकार है:-

उत्तर : श्री कौशल किशोर सिंह

दक्षिण : रेणु कुमारी

पूर्व : 90 फीट चौड़ी मुख्य सड़क

पश्चिम : सोसायटी प्लाट संख्या 9 और 10, सोसायटी के सदस्यों के लिए 18 फीट चौड़ी निजी सड़क से घिरा हुआ है।

16. विद्वान विचारण न्यायालयने निम्नलिखित बिंदुओं पर वाद कारणकी अनुपस्थिति के बारे में अपना निष्कर्ष दर्ज किया:-

(i) बिक्री विलेख के बारे में कोई विशेष दलील नहीं है जिसके द्वारा भूमि खरीदी गई थी।

(ii) वादी के पक्ष में भूमि के उत्परिवर्तन और उसके *जमाबंदी नंबर* के संबंध में कोई कथन नहीं है।

(iii) सरकार को भूमि राजस्व के भुगतान के बिंदु पर वादपत्र चुप है।

(iv) वादी ने वादपत्र की अनुसूची-1 में विस्तृत भूमि के अस्पष्ट दावे के साथ मुकदमा दायर किया था।

(v) यह वाद के कारण का भ्रम पैदा करने वाला चतुर मसौदा तैयार करने का मामला है क्योंकि वादपत्र से यह पता नहीं लगाया जा सका कि वादी के पास कार्रवाई का कोई कारण या मुकदमा करने का अधिकार है या नहीं।

17. मुझे डर है कि विद्वान विचारण न्यायालयने पेड़ों के लिए जंगल को नजरअंदाज कर दिया। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि वादी के पक्ष में *16 कट्ठा 3 धुर 16 धुरकी* क्षेत्रफल वाले भूखंड 900 की खरीद के लिए तीन बिक्री विलेख निष्पादित किए गए थे, जो कि वाद के कंडिका 3 से स्पष्ट है। *4 कट्ठा 16 धुर* क्षेत्रफल को तीन बिक्री विलेखों द्वारा खरीदा गया था या एक या दो बिक्री विलेखों के माध्यम से खरीदा गया था, यह आसानी से स्पष्ट किया जा सकता था, यदि विद्वान विचारण न्यायालय को इस बिंदु पर कोई संदेह होता। जब दस्तावेज न्यायालय के समक्ष लाए जाते हैं, जैसे कि इस मामले में बिक्री विलेख, और जिस दस्तावेज के माध्यम से वाद संपत्ति खरीदी गई थी, उस पर कुछ संदेह या अस्पष्टता बनी रहती है, तो वादी को स्थिति स्पष्ट करने के लिए बुलाया जा सकता था।

18. जहां तक भूमि के नामांतरण का सवाल है, इसके अभाव में स्वामित्व से इनकार नहीं किया जाएगा। यह कहना गलत नहीं होगा कि *खतियान* प्रविष्टि या

म्यूटेशन/जमाबंदी जैसे राजस्व अभिलेख न तो कोई अधिकार बनाते हैं और न ही उसे समाप्त करते हैं, जहां तक स्वामित्व का सवाल है। केवल इस आधार पर कि वादी भूमि के म्यूटेशन, *जमाबंदी* संख्या के आवंटन या सरकार को राजस्व किराया का भुगतान करने के संबंध में कोई कथन देने में विफल रहा, याचिकाकर्ता के पूरे मामले को संदिग्ध नहीं बनाता है, जिससे स्वामित्व और बेदखली के दावे पर संदेह पैदा होता है और मुकदमा करने के अधिकार से वंचित किया जाता है। म्यूटेशन/*जमाबंदी*/किराए के भुगतान के संबंध में कथन के अभाव में, विद्वान विचारण न्यायालयका यह निष्कर्ष कि वादी के पास मुकदमा करने का कोई अधिकार नहीं है, तथ्यों और कानून का उचित मूल्यांकन नहीं कहा जा सकता।

19. जहां तक मुकदमे की भूमि के विवरण का सवाल है, विद्वान विचारण न्यायालयने विवादित आदेश में उल्लेख किया है कि मुकदमा भूमि के अस्पष्ट दावे के साथ दायर किया गया है, जिसका विवरण वाद की अनुसूची-1 में दिया गया है। मामले के इस पहलू पर प्रतिवादियों/प्रमुख प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार ढंग से तर्क दिया कि मुकदमे की संपत्ति संहिता के आदेश VII नियम 3 के अनुसार पर्याप्त रूप से पहचान योग्य नहीं थी।

20. पुनः वाद की अनुसूची-1 पर वापस आते हुए, यह स्पष्ट है कि चौहद्दी के साथ संपत्तियों का विवरण दिया गया है, जिससे वाद संपत्ति को पूरी तरह से पहचाना जा सकता है और यदि विद्वान विचारण न्यायालयको लगा कि विवरण अस्पष्ट है, तो वह वाद वाली भूमि के संबंध में स्थिति को स्पष्ट करने के लिए वादी को स्पष्ट शब्दों में बता सकता था।

21. यह भी रिकॉर्ड में आया है कि *जमाबंदी* संख्या 2331 दिखाते हुए एक *मालगुजारी* रसीद दायर की गई थी और यह तथ्य मुख्य प्रतिवादियों के लिखित बयान में आया था जिसमें यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि वादी का दावा *जमाबंदी* संख्या 2331 तक सीमित होना चाहिए। इसका मतलब है कि *जमाबंदी* संख्या 2331 की मालगुजारी रसीद वाद के साथ रिकॉर्ड में थी। संहिता के आदेश VII नियम 11 पर विचार करते समय, विद्वान विचारण न्यायालयवाद में किए गए कथन पर गौर करने के लिए बाध्य था जैसा कि **सलीम भाई और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य (2003) 1 एससीसी 557** में रिपोर्ट किया गया, के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में माना गया है। यदि विद्वान विचारण न्यायालय ने इस तथ्य की अनदेखी की है, तो निश्चित रूप से उसने रिकॉर्ड पर एक

त्रुटि की है। रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री पर विचार किए बिना किसी भी निष्कर्ष को रिकॉर्ड करना ऐसे निष्कर्ष को विकृत और टिकाऊ नहीं बनाता है। **चर्च ऑफ क्राइस्ट चैरिटेबल ट्रस्ट एंड एजुकेशनल चैरिटेबल सोसाइटी बनाम पोन्नियम्मन एजुकेशनल ट्रस्ट (2012) 8 एससीसी 706** में रिपोर्ट किया गया, के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णयों पर चर्चा करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने देखा है कि कार्रवाई का कारण तथ्यों का एक समूह है के अनुसार वादी को प्रतिवादी के विरुद्ध अनुतोष का अधिकार है। इसी मामले में यह भी माना गया है कि वादी को डिक्री प्राप्त करने में सक्षम बनाने के लिए प्रत्येक तथ्य को साबित करना आवश्यक है, जिसे स्पष्ट शब्दों में प्रस्तुत किया जाना चाहिए। लेकिन विद्वान विचारण न्यायालय ने वाद कारण के बारे में इस तथ्य को अनदेखा कर दिया और कानून के प्रावधानों के विपरीत कार्य किया।

22. संहिता के आदेश VII नियम 11 में निम्नानुसार प्रावधान है:-

"11. वादपत्र की अस्वीकृति - वादपत्र को निम्नलिखित मामलों में अस्वीकार कर दिया जाएगा :-

(क) जहां यह वाद कारण का खुलासा नहीं करता है;

(ख) जहां दावा की गई अनुतोष का कम मूल्यांकन किया गया है, और वादी, न्यायालय द्वारा निर्धारित समय के भीतर मूल्यांकन को सही करने के लिए न्यायालय द्वारा अपेक्षित किए जाने पर, ऐसा करने में विफल रहता है;

(ग) जहां दावा की गई अनुतोष का उचित मूल्यांकन किया गया है, लेकिन वाद पत्र अपर्याप्त रूप से स्टाम्प किए गए कागज पर लौटाया गया है, और वादी, न्यायालय द्वारा निर्धारित समय के भीतर अपेक्षित स्टाम्प-पेपर की आपूर्ति करने के लिए न्यायालय द्वारा अपेक्षित होने पर ऐसा करने में विफल रहता है;

(घ) जहां वाद पत्र में दिए गए कथन से ऐसा प्रतीत होता है कि किसी कानून द्वारा वाद वर्जित है;

(ई) जहां इसे दो प्रतियों में दायर नहीं किया गया है;

(एफ) जहां वादी नियम 9 के प्रावधानों का पालन करने में विफल रहता है

[बशर्ते कि मूल्यांकन में सुधार या अपेक्षित स्टाम्प-पेपर की आपूर्ति के लिए न्यायालय द्वारा निर्धारित समय को तब तक नहीं बढ़ाया जाएगा जब तक कि न्यायालय, दर्ज किए जाने वाले कारणों से, संतुष्ट न हो जाए कि वादी को किसी असाधारण प्रकृति के कारण से मूल्यांकन में सुधार करने या अपेक्षित स्टाम्प-पेपर की आपूर्ति करने से रोका गया था, जैसा कि मामला है, के अनुसार, न्यायालय द्वारा निर्धारित समय के भीतर, अपील प्रस्तुत की जा सकती है और ऐसे समय को बढ़ाने से इनकार करने से वादी के साथ गंभीर अन्याय होगा।]"

23. वाद को तब खारिज किया जा सकता है जब उसमें कार्रवाई का कारण न बताया गया हो। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कई निर्णयों में और हाल ही में **एल्डेको हाउसिंग एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम अशोक विद्यार्थी और अन्य** के मामले में **(2023) एसएससी ऑनलाइन एससी 1612** में रिपोर्ट किया है कि वाद को खारिज करने के लिए, केवल पूरी वाद और उसके साथ संलग्न दस्तावेजों पर विचार किया जाना चाहिए ताकि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि इसमें कार्रवाई का कारण नहीं बताया गया है या यह किसी कानून द्वारा वर्जित है।

24. ऊपर की गई चर्चा के आलोक में, मुझे नहीं लगता कि यह वाद कारण का भ्रम पैदा करने वाले चतुर प्रारूपण का मामला है, बल्कि यह खराब प्रारूपण का मामला प्रतीत होता है जिसके परिणामस्वरूप विद्वान विचारण न्यायालय ने वाद कारण की अनुपस्थिति और वादी के खिलाफ मुकदमा करने के अधिकार की अनुपस्थिति के बारे में अपना निष्कर्ष दर्ज किया।

25. उपर्युक्त तथ्यों और परिस्थितियों के आलोक में, विवादित आदेश में विकृतियों पर विचार करते हुए, मेरा यह विचार है कि वर्तमान याचिका भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत स्वीकार्य है और **बी. पूंडाचा एवं अन्य (सुप्रा)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया जा सकता है।

26. इसके अलावा, अब तक की गई चर्चा के मद्देनजर, प्रतिवादी संख्या 1 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत प्राधिकारी प्रतिवादी संख्या 1 के मामले में अधिक मददगार नहीं हैं।

27. इसलिए, मैं विवादित आदेश को, की गई चर्चा के आलोक में और तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, स्वीकार्य नहीं पाता, विवादित आदेश में अधिकार क्षेत्र संबंधी त्रुटि है और इसलिए इसे रद्द किया जाता है।

28. परिणामस्वरूप, तत्काल याचिका स्वीकार की जाती है।

29. इस न्यायालय ने मामले के गुण-दोष पर कोई टिप्पणी नहीं की है और जो कुछ भी ऊपर कहा गया है वह केवल वर्तमान याचिका के निपटान के प्रयोजनों के लिए है। हालांकि, पक्षकारों को सभी मुद्दों को विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष उठाने की स्वतंत्रता है जो किसी भी टिप्पणी से प्रभावित हुए बिना मामले को आगे बढ़ाएगा।

(अरुण कुमार झा, न्यायमूर्ति)

बालमुकुंद/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।